आई.एस.एस.एन. संख्या : 2454–2458
नवरचना NAVRACHNA
www.grefiglobal.org/navrachna.php
वर्ष 4, अंक 1–2, जून–दिसम्बर 2018, पृ. 52–60

वैश्विक रुपान्तरण : अवधारणात्मक प्रारुप

वीरेन्द्र पाल सिंह*

यद्यपि 'वैश्वीकरण' शब्द का उद्भव 1960 के दशक में फ्रांसिसी व अमेरीकी रचनाओं में हुआ था परन्तु आज यह अवधारणा विश्व की सभी भाषाओं में पायी जाती है। फिर भी इसको अभी भी निश्चित रुप से परिभाषित नहीं किया जा सका है। वास्तव में यह एक वृहद अवधारणा है जिसके अर्न्तगत वैश्विक वित्तीय बाजारों से लेकर इन्टरनैट तक सभी कुछ सम्मिलित कर लिया जाता है। परन्तु यह आज की मानवीय दशाओं के विषय में कुछ अधिक अर्न्तदृष्टि देने में असमर्थ है। 1980 के दशक के अन्त में तथा 1990 के दशक में 'वैश्वीकरण' एक प्रमुख अवधारणात्मक प्रारुप के रुप में उभरता दिखायी पड़ता है तथा विभिन्न दार्शनिकों व समाज वैज्ञानिकों के साथ–साथ विभिन्न देशों के आर्थिक विकास के प्रारुप में भी इसकी चर्चा हर जगह की जाने लगी। इस सन्दर्भ में वैश्वीकरण की अवधारणा के विश्लेषणात्मक प्रारुप को समझने की आवश्यकता है। यद्यपि इस सन्दर्भ में कई प्रारुप विकसित किये गये हैं परन्तु डेविड हैल्ड व उनके साथियों (1999) द्वारा विकसित अवधारणात्मक प्रारुप वैश्वीकरण के अनुभवाश्रित अध्ययन एवं विश्लेषण के लिये अत्यधिक उपयोगी है। प्रस्तुत शोधपत्र में डेविड हैल्ड व उनके साथियों द्वारा विकसित वैश्वीकरण के अवधारणात्मक प्रारुप का विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

इस प्रारुप में वैश्वीकरण को समझने के लिये हैल्ड आदि द्वारा कुछ केन्द्रीय प्रश्नों को उठाया गया है जो कि निम्नलिखित हैं।

- वैश्वीकरण क्या है? इसे किस प्रकार से परिकल्पित किया जाना चाहिये?
- क्या समकालीन वैश्वीकरण एक नवीन दशा का प्रतिनिधित्व करता है?
- क्या वैश्वीकरण का सम्बन्ध राष्ट्र राज्य के अन्त, पुनरुत्थान अथवा रुपान्तरण से है?
- क्या समकालीन वैश्वीकरण राजनीति की नयी सीमाओं का निर्धारण करता है? वैश्वीकरण को किस प्रकार से 'सभ्य' तथा 'लोकतांत्रिक' बना सकते हैं?

  ये सभी प्रश्न वैश्वीकरण के समकालीन विवेचन तथा परिणामों से सम्बन्धित अनेक विवादों व बहसों के मूल में निहित हैं।

सामान्य रुप से वैश्वीकरण को परिवर्तन की एक ऐसी प्रक्रिया के रुप में देखा जा सकता है जो विश्व के सभी क्षेत्रों में आर्थिक, तकनीकी, राजनीति, संचार माध्यम, संस्कृति तथा पर्यावरण आदि

*प्रोफेसर एवं पूर्व विभागाध्यक्ष, वैश्वीकरण एवं विकास अध्ययन केन्द्र, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद– 211002 उ. प्र.।

सभी को विभिन्न तरीकों से प्रभावित करती है। डेविड हैल्ड व उनके सहयोगियों (1999: 2) के अनुसार, "वैश्वीकरण को प्रारम्भिक रुप से समकालीन सामाजिक जीवन के सभी पक्षों–सांस्कृतिक से आपराधिक, वित्तीय से आध्यात्मिकता में विश्वव्यापी अन्तःसंबद्धता के विस्तारीकरण, (widening) गहनीकरण (deepening) तथा तीव्रीकरण (speeding up) के रुप में विचारा जा सकता है।" विद्वानों में वैश्वीकरण के अन्तःसंबद्धता वाले पक्ष पर तो सहमति है परन्तु इसके अन्य पक्षों पर उनमें भारी मतभेद हैं। डेविड हैल्ड आदि ने वैश्वीकरण पर कार्य करने वाले विद्वानों को तीन प्रमुख श्रेणियों में विभाजित किया हैः अतिशयवादी; संशयवादी तथा रुपान्तरणवादी (सिंह 2004; 2007)।

वैश्वीकरण पर अतिशयवादी सोच रखने वाले विद्वानों का विश्वास है कि वैश्वीकरण मानव इतिहास में एक नये युग का प्रतिनिधित्व करता है, जिसमें सभी प्रकार के सम्बन्ध राष्ट्र–राज्यों से ऊपर उठ कर विश्व स्तर पर एकीकृत हो रहे है तथा इसके परिणामस्वरुप इन्हें (राष्ट्र–राज्यों को) निरन्तर अप्रासंगिक बना रहे हैं। पूंजी, वस्तुओं, व्यक्तियों तथा विचारों के निरन्तर बढ़ रहे सीमापार प्रवाह इस युग को पुनः दो उप–श्रेणियों में रखा जा सकता है। सकारात्मक अतिशय वादी तथा नकारात्मक अतिशयवादी। सकारात्मक अतिशयवादी मुख्य रुप से वे विद्वान है जो खुले विश्व बाजार की वकालत करते है और यह मानते हैं कि यह प्रक्रिया भविष्य मे चरम आर्थिक वृद्धि की गारंटी देगी तथा दीर्घकाल मे, प्रत्येक व्यक्ति के जीवन स्तर में सुधार ले आयेगी (ओहमे 1991;1995); तथा नकारात्मक अतिशयवादी जिनमें प्रमुख रुप से आलोचनावादी चिंतक (critical theorists) तथा नव–मार्क्सवादी विद्वान (मार्टिन एवं शू मैन 1997; रीच 1991; बैक 1997; श्नेपर 1994; वाइजमैन 1997, हॉपकिन्स व वालेरस्टीन 1996) सम्मिलित है, वैश्वीकरण के नकारात्मक प्रभावों को आलोचनात्मक रुप से प्रस्तुत करते हुए वैश्वीकरण की अवधारणा को पूर्णरुप से अस्वीकृत कर देते हैं।

संशयवादी विद्वान भी वैश्वीकरण के आर्थिक पक्ष पर ही अपना ध्यान केन्द्रित करते हुए यह तर्क देते है कि इस अन्तराष्ट्रीय आर्थिक एकीकरण की प्रक्रिया में कुछ भी नया नहीं है। प्रथम विश्व युद्ध के पूर्व काल से इसकी तुलना की जा सकती है। वे वैश्वीकरण के स्थान पर 'अन्तर्राष्ट्रीयकरण' शब्द का प्रयोग करना सही मानते है (हिर्स्ट एवं थाम्पसन 1996; वीज़ 1997)। वे यह भी तर्क देते है कि राष्ट्र–राज्यों की भूमिका अभी भी उतनी है मजबूत है जितनी हमेशा रही है।

रुपान्तरणवादी विद्वान जबकि यह तर्क देते हैं कि उन सभी प्रमुख आर्थिक, सांस्कृतिक, सामाजिक तथा राजनीतिक परिवर्तनों, जो आज विश्व के सभी व्यक्तियों का आभासी रुप से (virtually) प्रभावित कर रहे हैं, की केन्द्रीय संचालक शक्ति वैश्वीकरण है। वे वैश्वीकरण को तकनीकी, आर्थिक गतिविधि, शासन–विधि (governance), संचार आदि के क्षेत्रों में परिवर्तन की निकट रुप से जुड़ी हुई प्रक्रियाओं के कुल परिणाम के रुप में देखते हैं। इन सभी क्षेत्रों में होने वाले विकास परस्पर सुदृढ़ता प्रदान करने वाले अथवा स्वतुल्य (reflexive) होते है जिससे कि कारण तथा परिणाम के मध्य कोई भेद नहीं किया जा सकता। रुपान्तरवादी (व्यापार, निवेश, प्रवजन, सांस्कृतिक शिल्पकृतियों (artifects), पर्यावरणीय कारको आदि के) सीमापार प्रवाहों के समकालीन प्रतिमानों को किसी भी ऐतिहासिक दृष्टान्त से भिन्न मानते हैं। इस प्रकार के प्रवाह सभी राष्ट्रो को आभासी रुप से एक विश्व व्यवस्था में एकीकृत करते है तथा सभी स्तरों पर एक बड़ा परिवर्तन लाते हैं। इस प्रकार वैश्वीकरण का प्रभाव केवल आर्थिक तथा राजनीतिक प्रक्रियाओं तक ही सीमित नहीं है अपितु इसके प्रभाव को संचार तथा सामाजिक व सांस्कृतिक संस्थाओं पर भी देखा जा सकता है।

वैश्वीकरण से सम्बन्धित बहस मे व्याप्त इन तीन प्रमुख प्रवृत्तियों को डेविड हैल्ड व उनके साथियों ने निम्नलिखित तालिका में प्रस्तुत किया हैः

	अतिशयवादी	संशयवादी	रुपान्तरणवादी
वैश्वीकरण में नवीन क्या है?	एक वैश्विक युग	व्यापार समूहों का निर्माण, पूर्व कालों की तुलना में कमजोर भू–शासन	ऐतिहासिक रुप से वैश्विक अंतः संबद्धता के अभूतपूर्व स्तर
प्रमुख विशेषताए	वैश्विक पूंजीवाद, वैश्विक शासन प्रणाली, वैश्विक नागरिक समाज	1890 के दशक की तुलना में विश्व में कम निर्भरता	स्थूल (गहन व व्यापक) वैश्वीकरणञ
राष्ट्रीय सरकारों की शक्तियां	पतन या क्षय	प्रबलित अथवा वृद्धि	पुनर्गठित अथवा पुनःरचित
वैश्वीकरण की संचालक शक्तियां	पूंजीवाद तथा टेकनॉलोजी	राज्य तथा बाजार	आधुनिकता की संयुक्त शक्तियां
संस्तरण के प्रतिमान	पुराने सौपान क्रम का क्षय	दक्षिण के पार्श्वीकरण में वृद्धि	विश्व व्यवस्था का नया शिल्प
प्रमुख उदाहरण	मैकडोनाल्ड, मेडोना आदि	राष्ट्रीय हित	राजनीतिक समुदाय का रुपान्तरण
वैश्वीकरण का अवधारणीकरण	मानवीय क्रिया के प्रारुप की पुनर्व्यवस्था के रुप में	अंतर्राष्ट्रीयकरण व क्षेत्रीयकरण के रुप में	अन्तर्क्षेत्रीय सम्बन्धों व दूरस्थ क्रिया की पुनर्व्यवस्था के रुप में
ऐतिहासिक विक्षेप पथ	वैश्विक सभ्यता	क्षेत्रीय ब्लॉक/सभ्यताओं का संघर्ष	अनिश्चितः वैश्विक एकीकरण तथा विखण्डन
संक्षिप्त वितर्क	राष्ट्र–राज्य का अन्त	अंतर्राष्ट्रीयकरण राज्य की सहमति तथा सहयोग पर निर्भर	वैश्वीकरण राज्य शक्ति व विश्व राजनीति को रुपान्तरित करता है

वैश्वीकरण से संबंधित विवादों के स्रोत

वैश्वीकरण के वर्तमान उपागमों में निम्नलिखित पांच प्रमुख मुद्दों पर विवादों के स्रोत बिन्दु हैं:

1. अवधारणात्मकता (conceptualization)
2. कारणात्मकता (causation)
3. कालखण्डता (periodization)
4. प्रभाव (impact)
5. विक्षेप पथ (trajectories)

1. अवधारणात्मकता:

वैश्वीकरण के अवधारणात्मकता के स्तर पर संशयवादी व अतिशयवादी दोनों ही विद्वानों में वैश्वीकरण को एक पूर्वानुमानित एकमात्र दशा अथवा अन्तिम अवस्था के रुप में देखने की प्रवृत्ति स्पष्ट रुप से दृष्टिगोचर होती है। वे इसे एक पूर्णरुप से एकीकृत बाजार के रुप में देखते हैं सिमें मूल्य तथा ब्याज–दर की एकरुपता है। तद्नुसार, आर्थिक वैश्वीकरण के समकालीन प्रतिमानों का आकलन इस सन्दर्भ में किया जाता है कि वे इसे आदर्श प्रारुप से कितनी एकरुपता रखते हैं (बर्गर व डोरे 1996; हर्स्ट व थाम्पसन 1996बी)। परन्तु इन उपागमों की अपनी अलग त्रुटियां भी हैं क्योंकि यह किसी भी प्रकार से पूर्वानुमानित नहीं किया जा सकता कि वैश्विक बाजारों को पूर्णतः प्रतियोगी होने की आवश्यकता है। देखा जाये तो राष्ट्रीय बाजार भी पूर्णतः प्रतियोगी नहीं होते तथा इनमें भी अपूर्णता के कई स्वरुप देखने को मिलते हैं, फिर भी अर्थशास्त्री इन्हें बाजार के रुप में देखते हैं। अतः वैश्विक बाजार भी राष्ट्रीय बाजारों की ही भांति अपूर्ण व समस्याग्रस्त हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त ये आदर्शवादी उपागम अस्वीकार्य रुप से उद्देश्यवादी व अनुभववादी भी हैं।

अस्वीकार्य रुप से उद्देश्यवादी इस अर्थ में कि ये वर्तमान की व्याख्या एक रेखीय प्रगति की दिशा में भविष्य की किसी अन्तिम अवस्था के रुप में करने का प्रयत्न करते हैं। यद्यपि यह मान लेने का कोई तार्किक अथवा अनुभवात्मक आधार नहीं है कि वैश्वीकरण की कोई एक निश्चित या अन्तिम अवस्था है। अस्वीकार्य रुप से अनुभववादी इस अर्थ में कि वे वैश्विक प्रवृत्तियों से प्राप्त सांख्यकीय आंकड़ों के आधार पर वैश्वीकरण सिद्धान्त को मानने अथवा अस्वीकार करने की बात करते हैं। यद्यपि इस प्रकार की पद्वति से पर्याप्त समस्याएं उत्पन्न हो सकती हैं। उदाहरण के लिये, इस तथ्य के आधार पर कि विश्व में मातृभाषा के रुप में अंग्रेजी के मुकाबले चीनी भाषा बोलने वालों की अधिक जनसंख्या है, यह स्थापित नहीं किया जा सकता कि चीनी भाषा एक वैश्विक भाषा है। अतः वैश्वीकरण सिद्धान्त को मानने अथवा अस्वीकार करने हेतु सांख्यकीय आंकड़ों के साथ–साथ गुणात्मक व्याख्या के महत्व पर भी बल दिया जाना चाहिये।

इसकी तुलना में, वैश्वीकरण के सामाजिक–ऐतिहासिक उपागम में इसका एक ऐसी प्रक्रिया के रुप में अध्ययन किया जाता है जिसका कोई निश्चित अथवा निर्धारित ऐतिहासिक 'गन्तव्य' नहीं है; चाहे हम इसे एक पूर्णतः एकीकृत वैश्विक बाजार, एक वैश्विक समाज अथवा एक वैश्विक सभ्यता के रुप में समझे। पहले से ही यह मान लेने का कोई कारण नहीं है कि वैश्वीकरण को विशुद्ध रुप में एक दिशा उद्विकसित होना चाहिये अथवा इसे मात्र एक अलग आदर्शात्मक दशा (विशुद्ध वैश्विक बाजारों) के सन्दर्भ में समझा जाना चाहिये। तदानुसार, इन रुपान्तरणकारी विद्वानों के लिये,

वैश्वीकरण को एक अधिक अनिश्चित व अबाध ऐतिहासिक प्रक्रिया के अर्थ में कल्पित किया जाना चाहिये जो सामाजिक परिवर्तन के रुढ़िवादी रेखीय प्रारुपों में सही नहीं बैठती। इसके साथ ही ये विवरण इस विचार के प्रति भी संशयवादी है कि मात्र गणनात्मक प्रमाणों के आधार पर वैश्वीकरण की 'वास्तविकता' की पुष्टि अथवा खंडन किया जा सकता है।

इसके साथ जुड़ा एक अन्य मुद्दा है कि क्या वैश्वीकरण को एक निश्चित अथवा विभेदीकृत स्वरुप में समझना चाहिये? अधिकतर अतिशयवादी और संशयवादी साहित्य में वैश्वीकरण को प्रमुंख रुप से एक निश्चित आर्थिक अथवा सांस्कृतिक प्रक्रिया के अर्थ में निरुपित किया गया है। वैश्वीकरण का इस अर्थ में निरुपण सामाजिक जीवन के विभिन्न पक्षों वैश्वीकरण को (राजनीतिक से सांस्कृतिक तक) में वैश्वीकरण के विशिष्ट प्रतिमानों की उपेक्षा करता है। अतः वैश्वीकरण को एक उच्च विभेदीकृत प्रक्रिया के अर्थ में निरुपित किया जाना अधिक उपयुक्त होगा जिसका परिलक्षण सामाजिक गतिविधियों के सभी महत्वपूर्ण क्षेत्रों (राजनीतिक, मिलिट्री, कानूनी, पर्यावरणीय, अपराध जगत आदि) में होता है।

2. कारणात्मकता

वैश्वीकरण की बहस का एक महत्वपूर्ण पहलू इसकी कारणात्मकता का मुद्दा हैः कि इसकी संचालन शक्ति किस कारक में है? वैश्वीकरण की बहस के वर्तमान विवरणों में प्रायः दो अलग–अलग व्याख्याएं सम्मुख आती हैंः एक वे जो एक अथवा प्राथमिक कारक, जैसे पूंजीवाद अथवा तकनीकी परिवर्तन, पर बल देती हैं; तथा दूसरी वो जो वैश्वीकरण को सम्मिलित कारकों का परिणाम मानती हैं जिसमें तकनीकी परिवर्तन, बाजार शक्तियां, वैचारिकी, राजनीतिक निर्णय भी सम्मिलित हैं। सरल अर्थों में विभेद प्रभावी रुप से वैश्वीकरण के एक–कारकीय व बहुकारकीय वृतान्तों में है। वैश्वीकरण के किसी भी वृतान्त में इस केन्द्रीय प्रश्न का उत्तर स्पष्ट रुप से दिया जाना चाहिये। वैश्वीकरण की कारणात्मकता के विवाद से जुड़ा एक महत्वपूर्ण आधुनिकता समबन्धी बहस है। कुछ विद्वानों के लिये वैश्वीकरण पश्चिमी आधुनिकता (पश्चिमीकरण) का वैश्विक विसरण मात्र है (उदा. विश्व व्यवस्था सिद्धान्त के वृतान्त)। इसके विपरीत अन्य विद्वान पश्चिमीकरण व वैश्वीकरण में भेद करते हैं तथा उपरोक्त विचार को अस्वीकार करते हैं। अतः वैश्वीकरण की व्याख्या में इस प्रश्न पर विचार करना आवश्यक है।

3. कालखण्डता

वैश्वीकरण के अध्ययन में यह जानना अति आवश्यक है कि समकालीन वैश्वीकरण क्या पूर्णरुप से एक नया युग है? या यह पूर्णतः विश्वयुद्ध के बाद का कालखण्ड है, 1970 के बाद का कालखण्ड है, अथवा पूरी 20वीं शताब्दी के कालखण्ड को सामान्य रुप से वैश्वीकरण का काल मान लेना चाहिये। विश्व व्यवस्था तथा सभ्यताओं के स्तर पर हुयी अन्तःक्रिया के हाल ही के अध्ययनों से, सामान्य रुप से इस स्वीकृत मत पर कि वैश्वीकरण प्राथमिक रुप से आधुनिक युग की प्रघटना है, प्रश्न खड़े हो गये हैं। विश्व धर्मों तथा मध्य–युगीन व्यापार नेटवर्कों का अस्तित्व इस विचार को अधिक दृढ़ता प्रदान करता है कि वैश्वीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसका एक लम्बा इतिहास है। अतः वैश्वीकरण के समकालीन स्वरुप की व्याख्या करते समय आधुनिक युग से भी परे जाने का प्रयास किया जाना चाहिये।

4. प्रभाव

सामाजिक लोकतंत्र व आधुनिक कल्याणकारी राज्य के अन्त में आर्थिक वैश्वीकरण का हाथ होने का संकेत व्यापक साहित्य में दिया गया है। इस मत के अनुसार, वैश्विक प्रतिस्पर्धात्मक दबाब ने सरकारों को राज्य–व्यय तथा हस्तक्षेपों में कटोती करने के लिये बाध्य किया है। विभिन्न पक्षपातपूर्ण वचनबद्धताओं के बाबजूद, सभी सरकारों को इस एक दिशा में बाध्य किया गया है। इस सिद्धान्त में वैश्वीकरण को एक 'लोहे के पिंजरे' के रुप में चित्रित करने वाली निर्धारणात्मक अवधारणा निहित है जो सरकारों पर एक वित्तीय अनुशासन थोपती है तथा उन प्रगतिशील नीतियों व सामाजिक सौदेबाजियों की संभावनाओं को क्षीण कर देती हैं जिन पर विश्व–युद्ध के बाद उदित कल्याणकारी राज्य टिके हुए थे। अतः पदस्थ सरकारों की वैचारिकी का विचार किये बिना पश्चिमी राष्ट्रों में आर्थिक व कल्याणकारी व्यूहरचनाओं के झुकाव में स्पष्ट अभिवृद्धि हो रही है।

हाल ही में हुए व्यापक अध्ययनों में इस सिद्धान्त का जोरदार तरीके से विरोध हुआ है तथा इस बात पर संदेह व्यक्त किया गया है कि वैश्वीकरण राष्ट्रीय सरकारों को आर्थिक नीतियों के निर्माण में प्रभावकारी तरीके से स्थिर कर देता है। इन अध्ययनों में इस विषय पर महत्वपूर्ण अंतर्दृष्टि प्रदान की गयी है कि किस प्रकार से व घरेलू संस्थाओं की संरचनाएं, राज्य व्यूहरचनाएं तथा एक देश की वैश्विक बलाधिक्रम में स्थिति वैश्वीकरण के सामाजिक व राजनीतिक प्रभावों के साथ मध्यस्थता कर लेती हैं। अनेकों विद्वानों ने इस विषय पर अपना योगदान दिया है। ऐसा करते हुए ये अध्ययन एक ऐसे परिष्कृत प्ररुप की आवश्यकता पर बल देते हैं जो देखे कि वैश्वीकरण किस प्रकार से राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था व राष्ट्रीय समुदायों को प्रभावित करता है जो इसके उन विभिन्न विशेष प्रभावों तथा स्वरुपों के सांकेतिक महत्व को ज्ञापित करता है, जिनमें इसका प्रबन्धन, प्रतिस्पर्धा एवं विरोध किया जाता है।

5. विक्षेप पथ

वैश्वीकरण के तीनों उपागमों में से प्रत्येक में वैश्विक परिवर्तन की गत्यात्मकता व दिशा की एक विशिष्ट अवधारणा है जो वैश्वीकरण के प्रतिमानों पर एक समग्र आकार निरुपित करती है तथा ऐसा करते समय एक ऐतिहासिक प्रक्रिया के रुप में वे वैश्वीकरण के विशिष्ट स्वरुप को प्रस्तुत करते हैं। अतिशयवादी विद्वान वैश्वीकरण को वैश्विक एकीकरण की धर्मनिरपेक्ष प्रक्रिया के रुप में देखते हैं। उनके लिए यह मानव प्रगति की प्राकृतिक रुप से घटित, रेखीय परिवर्तन ऐतिहासिक प्रक्रिया है। जबकि संशयवादी विद्वान इसका मूल्यांकन पूर्व ऐतिहासिक युगों के परिप्रेक्ष्य में करते हुए 19वीं शताब्दी के अन्तिम दशकों में पायी जाने वाली वैश्विक परस्पर निर्भरता से तुलना करते हैं। ऐतिहासिक परिवर्तन इन दोनों ही प्रारुपों को रुपान्तरणवादी विद्वानों का समर्थन प्राप्त नहीं होता। क्योंकि वे इतिहास को एक ऐसी प्रक्रिया के रुप में देखते हें जो नाटकीय उतार–चढ़ावों अथवा अनिरन्तरताओं द्वारा बाधित की जाती है। ऐसा दृष्टिकोण इतिहास की आकस्मिकता पर बल देता है और विशेष ऐतिहासिक परिस्थितियों व शक्तियों के संगम से युग परिवर्तन कैसे उत्पन्न होता है। रुपान्तरणवादी वैश्वीकरण की प्रक्रिया को आकस्मिक और अन्तर्विरोधी मानते हैं। इस सिद्धान्त के अनुसार, वैश्वीकरण समाज को विपरीत दिशाओं में खिंचता व धकेलता है; यह एकीकृत करते हुए विखण्डित भी करता है, सहयोग के साथ संघर्ष उत्पन्न करता है, सार्वभौमिक के साथ स्थानीयकरण भी करता है। इस प्रकार से वैश्वीकरण का विक्षेप पथ वृहद रुप से अनिश्चित व अनिर्धारित है।

वैश्वीकरण का नवीन अवधारणात्मक प्रारुप

वैश्वीकरण क्या है? सरल अर्थों में, वैश्वीकरण का तात्पर्य वैश्विक अन्तर्संबद्धता के विस्तारीकरण, गहनीकरण तथा तीव्रीकरण से है। परन्तु इस प्रकार की परिभाषा को और अधिक विस्तार देने की आवश्यकता है।

वैश्वीकरण को स्थानीय, राष्ट्रीय तथा क्षेत्रीय के एक अबाध क्रम (continuum) में अवस्थित किया जा सकता है। इस अबाध क्रम के एक सिरे पर वे सामाजिक व आर्थिक सम्बन्ध तथा नेटवर्क्स स्थित हैं जो स्थानीय तथा अथवा राष्ट्रीय आधार पर संगठित होते हैं; अबाध क्रम के दूसरे सिरे पर वे सामाजिक व आर्थिक सम्बन्ध तथा नेटवर्क्स स्थित हैं जो क्षेत्रीय व वैश्विक अन्तःक्रियाओं के व्यापक स्तर पर निश्चित रुप धारण करती हैं। वैश्वीकरण को परिवर्तन की उन स्थानिक–लौकिक(spacio-temporal) प्रक्रियाओं के रुप में संदर्भित किया जा सकता है जो मानवीय संबंधों के संगठन में हो रहे रुपान्तरण को, मानवीय गतिविधियों को क्षेत्रीय व महाद्वीपीय स्तर पर परस्पर जोड़ते व विस्तारित करते हुए, आधार प्रदान करती हैं।

वैश्वीकरण को एक ऐसी प्रक्रिया (प्रक्रियाओं के समुच्चय के रुप में) विचारा जा सकता है जो सामाजिक संबंधों व लेन–देन संव्यवहारों के स्थानिक संगठन को मूर्त रुप प्रदान करता है–जिसका मूल्यांकन उनकी व्यापकता, गहनता, वेग तथा प्रभाव कम रुप में किया जाता है–जिनके द्वारा गतिविधियों, अन्तःक्रियाओं तथा शक्ति प्रयोग के अंतरमहाद्वीपीय अथवा अंतरक्षेत्रीय प्रवाहों तथा नेटवर्कों को उत्पन्न होते हैं (हैल्ड आदि 1999: 16)।

Globalization can be thought of as a process (or set of processes) which embodies a transformation in the spatial organization of social relations and transactions-assessed in terms of their extensity, intensity, velocity and impact-generating transcontinental or interegional flows and networks of activity, interaction, and exercise of power (Held et al. 1999:16).

इस संदर्भ में प्रवाहों का संबंध समय व स्थान के पार भौतिक कलाकृतियों, लोगों, चिन्हों, टोकनों तथा सूचना से है; वहीं नेटवर्क स्वतंत्र कर्ताओं, गतिविधियों की आसंधियों (nodes) अथवा शक्ति के स्थानों के मध्य नियमित अथवा प्रतिमानित अन्तःक्रियाओं से है।

वैश्वीकरण के ऐतिहासिक स्वरुप

वैश्वीकरण के ऐतिहासिक स्वरुप का संबंध पृथक ऐतिहासिक युगों में वैश्विक अन्तर्संबद्धता के स्थानिक–लौकिक व संगठनात्मक लक्षणों से है। वैश्वीकरण के ऐतिहासिक स्वरुपों के विवेचन व तुलना के चार स्थानिक–लौकिक आयाम हैं:

- वैश्विक नेटवर्कों की व्यापकता (the extensity of global networks),
- वैश्विक अन्तर्संबद्धता की गहनता (the intensity of global interconnectedness),
- वैश्विक प्रवाहों का वेग (the veloity of global flows)
- वैश्विक अन्तर्संबद्धता की प्रभाव प्रवृत्ति (the impact propensity of global interconnectedness)

उपरोक्त प्रारुप वैश्वीकरण के गणनात्मक व गुणात्मक मूल्यांकन का आधार प्रदान करता है। स्थानिक–लौकिक आयामों के अतिरिक्त वैश्वीकरण के चार संगठनात्मक आयाम भी हैं। ये हैं:

- वैश्वीकरण की अधिसंरचना (the infrastructure of globalization)

• वैश्विक नेटवर्कों का संस्थापन व शक्ति प्रयोग (the institutionalization of global networks and the exercise of power)

• वैश्विक संस्तरण के प्रतिमान (the pattern of global stratification)

• वैश्विक अन्तःक्रिया के प्रतिमान (the dominant modes of global interaction)

समकालीन वैश्वीकरण के स्वरुप का निर्धारण

उपरोक्त प्रारुप के आधार पर हैल्ड आदि (1999: 21–27) ने वैश्वीकरण का वर्गीकरण निम्न चार श्रेणियों में किया है:

टाइप 1: स्थूल वैश्वीकरण (Thick globalization)

वैश्वीकरण का यह प्रकार एक ऐसे विश्व का प्रतिनिधित्व करता है जिसमें वैश्विक नेटवर्कों की व्यापक पहुंच सामाजिक जीवन के सभी क्षेत्रों अथवा पक्षों– आर्थिक से लेकर सांस्कृतिक तक– में उनकी उच्च गहनता, उच्च वेग तथा उच्च प्रभाव प्रवृत्ति को धारण किये रहती है। इसको स्थूल वैश्वीकरण (Thick globalization) की संज्ञा ही जा सकती है। कुछ संशयवादी विद्वानों के अनुसार, 19वीं शताब्दी के अन्तिम काल खण्ड के वैश्विक साम्राज्य इस श्रेणी के काफी निकट हैं। इस प्रकार स्थतिज तौर पर वैश्वीकरण के अन्य रुप भी हो सकते हैं जिनमें से यह एक है।

टाइप 2: विसरित वैश्वीकरण (Diffused globalization)

वैश्वीकरण का यह प्रकार एक ऐसे विश्व का प्रतिनिधित्व करता है जिसमें वैश्विक नेटवर्कों में उच्च व्यापकता, उच्च गहनता तथा उच्च वेग तो पाया जाता है परन्तु उनमें प्रभाव प्रवृत्ति का स्तर निम्न रहता है। इसको हम विसरित वैश्वीकरण (Diffused globalization) की संज्ञा दे सकते हैं क्योंकि इनमें प्रभावों की उच्च स्तर पर मध्यस्थता व नियन्त्रण किया जाता है। ऐतिहासिक रुप से इस प्रकार के वैश्वीकरण का कोई उदाहरण तो नहीं मिलता परन्तु आदर्श रुप से यह एक ऐसी अवस्था है जो अपरिमित आर्थिक वैश्वीकरण के आलोचकों के लिए अपेक्षित हो सकती है।

टाइप 3: विस्तृत वैश्वीकरण (Expansive globalization)

वैश्वीकरण का यह प्रकार वैश्विक अन्तर्संबद्धता की उच्च व्यापकता को निम्न गहनता, निम्न वेग परन्तु उच्च प्रभाव प्रवृत्ति से जोड़ता है। इसको हम विस्तृत वैश्वीकरण (Expansive globalization) की संज्ञा दे सकते हैं क्योंकि यह अपने प्रवाहों के वेग की अपेक्षा अपनी पहुंच व प्रभाव से अधिक परिभाषित होता है। पश्चिमी राजसी विस्तारवाद का पूर्व आधुनिक काल जिसमें यूरोपियन साम्राज्यों ने पर्याप्त अन्तरसभ्यतायी प्रभावों के साथ एक अस्थायी वैश्विक पहुंच बना ली थी, इस श्रेणी के अधिक निकट कहा जा सकता है।

टाइप 4: विरल वैश्वीकरण (Thin globalization)

वैश्वीकरण का यह प्रकार एक ऐसे विश्व का प्रतिनिधित्व करता है जिसे विरल वैश्वीकरण की संज्ञा दी जा सकती है क्योंकि इसमें वैश्विक नेटवर्कों की उच्च व्यापकता, समान स्तर की गहनता, वेग अथवा प्रभाव से संबद्ध नहीं हो पाती क्योंकि इन सभी का स्तर निम्न रहता है। आरम्भिक सिल्क तथा विलासता से संबंधित वस्तुओं के व्यापार का परिपथ (सर्किट) जो यूरोप, चीन और पूर्वी देशों को जोड़ता था, उस श्रेणीक्रम के निकट माना जा सकता है। हैल्ड आदि का मानना है कि उपरोक्त तत्वों के विभिन्न संयोजन से वैश्वीकरण के विभिन्न प्रकार तार्किक रुप से प्राप्त किये जा सकते हैं

परन्तु यह आवश्यक नहीं कि वे ऐतिहासिक अथवा वास्तविक रुप में भी विद्यमान हों परन्तु भविष्य में इनकी संभावना से इन्कार भी नहीं किया जा सकता।

उपसंहार

इस प्रकार से हम देखते हैं कि वैश्वीकरण न तो एक पृथक अवस्था है और न ही एक रेखीय प्रक्रिया। इसके अतिरिक्त, यह एक उच्च स्तरीय विभेदीकृत प्रघटना है जिसमें राजनीतिक, मिलिटी, आर्थिक, सांस्कृतिक, प्रवजिक तथा पर्यावरणीय जैसी भिन्न गतिविधियों व अन्तःक्रियाओं के क्षेत्र सम्मिलित हैं। इनमें से प्रत्येक क्षेत्र में संबंधों व गतिविधियों के विभिन्न प्रतिमान सम्मिलित हैं। इनको हम 'शक्ति के स्थलों' के रुप में विचार सकते हैं। राजनीतिक, मिलिटी, आर्थिक, सांस्कृतिक, प्रवजिक तथा पर्यावरणीय के क्षेत्र शक्ति के केन्द्रीय स्थल हैं जिनमें वैश्वीकरण की प्रक्रियाएं घटित हो रही हैं। अतः आवश्यकता इस बात की है कि इन सभी क्षेत्रों का विस्तृत अध्ययन किया जाये। उपरोक्त अवधारणात्मक प्रारुप इस प्रकार के अध्ययनों का भली प्रकार से मार्गदर्शन कर सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

ओहमे, केनीची, 1991: *द बार्डरलेस वर्ल्ड*, न्यूयार्कः हार्पर कोलिंस

बैक, उलरिक, 1997: *वॉज इट ग्लोबलाइजर्स ?* फैंकफर्टः सूहकैम्प

रीच, राबर्ट बी., 1991: *द वर्क ऑफ नेशंस*, लंदनः सिमोन एण्ड सूटार।

मार्टिन, हंस पीटर एवं हैराल्ड शूमैन, 1997: *द ग्लोबल ट्रैपः ग्लोबलाइजेशन एण्ड द असाल्ट ऑन प्रोसपेरिटी एण्ड डेमोक्रेसी*, न्यूयार्कः जेड बुक्स एण्ड प्लूटो प्रेस आस्ट्रेलिया।

वाइजमैन, जॉन 1997: *अल्टरनैटिव्ज टू ग्लोबलाइजेशनः एन एशिया पेसिफिक पर्सपेक्टिव*, मेलबोर्नः कम्यूनिटी एड अब्रोड।

वीज़, लिंडा, 1997: *ग्लोबलाइजेशन एण्ड द मिथ ऑफ द पावरलैस स्टेट*, न्यू लेफ्ट रिव्यू, 225:3–7।

सिंह, वी.पी., 2004: "ग्लोबलाइजेशन, न्यू मीडिया टैक्नॉलाजी, एण्ड सोशियो कल्चरल चेंजिज इन इंडिया", *इमर्जिंग ट्रेंडस इन डेवलपमेंट रिसर्च*, वोल्यू. 10, नं. 1–2, पृ. 3–9।

सिंह, वी.पी., 2007: "ग्लोबलाइजेशन एण्ड सोशल स्ट्रेटिफीकेशन इन इंडिया", *इमर्जिंग ट्रेंडस इन डेवलपमेंट रिसर्च*, वोल्यू. 13, नं. 1–2, पृ. 1–8।

हेल्ड, डेविड, मैकग्रयु, ए., गोल्ड ब्लेट., डेविड तथा पेरेटन जे. 1999: *ग्लोबल ट्रांसफॉरमेशंस– पालिटिक्स, इकोनोमिक्स एण्ड कल्चर*, केम्ब्रिजः पालिटी प्रेस।

श्नेपर, डोमीनिकी, 1994: *ला कम्यूनॉट डेस सिटोयेंस*. पैरिसः गलीमार्ड।

होपकिन्स, टेरेंस के., एवं इमैनुअल वालेरस्टीन, 1996: *द ऐज ऑफ ट्रांजिसनः ट्रेजेक्टरी ऑफ वर्ल्ड सिस्टम, 1945–2025*, लंदनः जेड बुक्स।

हर्स्ट, पॉल, एव ग्राहम थाम्पसन, 1996: *ग्लोबलाइजेशन इन क्वैश्चन*, कैमब्रिजः पोलिटी।